International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 209-211

रेखाचित्र–संग्रह 'आत्म कथ्य' में व्यंग्य विधान

सुमन रानी
चौ0 देवी लाल विश्वविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

यंग्यकार अपनी प्रतिमा से व्यंग्य गढ़ता है, लेकिन उसकी कलम जान–बुझकर उन्हीं स्थितियों पर उठती है, जिनके केंद्र में पीड़ा, शोषण, विकृति और अनाचार है। प्रतिमा कल्पना के सहारे एक मनोरंजनधर्मी व्यंग्य तैयार किया जा सकता है, लेकिन ऐसे व्यंग्य में सत्यान्वेषी तल्खी और अनुभव सिद्ध संवेदनात्मक तीव्रता नहीं होगी। व्यंग्यकार की प्रखर संवेदनशीलता समूह के दिमाग को खोलने और ह्रदय को फैलाने का काम एक साथ करती है, इसलिए व्यंग्यकार को भावुक नहीं संवेदनशील बनना पड़ता है। उसका मूल लक्ष्य उत्तेजित करना है, कुठाराघात द्वारा आँखें खोलना है। व्यंग्य की विराटता और पौरूष ने लगातार आश्वस्त किया है।

डॉ0 धनंजय वर्मा ने व्यंग्य को परिभाषित करते हुए लिखा है :– ''सच्चे और सार्थक व्यंग्य की यह ताकत होती है कि वह मूल्यों की आपाधापी और संक्रान्ति का चित्र ही नहीं देता, नए मूल्यों की तलाश और उनकी ओर इशारा भी करता है।'' [1] डॉ0 छविनाथ मिश्र ने व्यंग्य की परिभाषा देते हुए लिखा है – ''न केवल इसने लोक दावपेच को समझने की नई दृष्टि और व्यवहार की कुशलता ही दी है, अपितु वस्तु – स्थिति की प्रखर और सूक्ष्मतम अनुभूति द्वारा जीवन को नई दिशा भी दी है। यह परिणाम उसी का है कि हम अब अधिक समझदार हुए हैं।'' [2] जिस तीव्र सामाजिक राजनीतिक सांस्कृतिक बाध्यता ने व्यंग्य लेखन को सघन किया हैं वहीं आध्यता व्यंग्य विधा के अधतन विकास का कारण भी है। कोई भी व्यंग्य लेख पाठक को किसी हल्के–फुल्के वातावरण में नहीं ले जाता, अपितु कुछ सोचने के लिए विवश करता है। किस्सागोई से मुक्त धारदार व्यंग्य लेखन की विकास–यात्रा का सर्वेक्षण क्रमशः देता है। यदपि हमें व्यंग्य विधा का प्रारंभिक भारतेंदु हरिशचन्द्र को स्वीकार करना पड़ेगा। भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने ब्रिटिश शासन की लालची और लुटेरे चरित्र को अंग्रेज स्त्रोत में व्यंग्यात्मक रूप से खुली अभिव्यक्ति दी है :–''खजाना तुम्हारा पेट है, लालच तुम्हारी क्षुधा है, सेना तुम्हारा चरण है, खिताब तुम्हारा प्रसाद है, अतएव है विराट रूप अंग्रेज ! हम तुमको प्रणाम करते हैं।''[3] हरिशंकर परसाई ने 'अपनी–अपनी बिमारी ' नामक रचना में व्यंग्य की परिभाषा इस रूप में दी है :–''जो नहीं है उसे खोज लेना शोधकर्ता का काम हैं, काम जिस तरह होना चाहिए उस तरह न होने देने विशेषज्ञ का काम है, जिस बीमारी से आदमी मर रहा है उससे उसे न मरने देकर दूसरी बीमारी से मार डालना डाक्टर का काम है, अगर जनता सही रास्ते पर जा रही है, तो उसे गलत रास्ते पर ले जाना नेता का काम है, ऐसा पढ़ाना कि छात्र बाजार में सबसे अच्छे नोट्स की खोज में स्वयं ही जाएँ, प्रोफेसर का काम है।'' [4] मानव प्रकृति जिसमें सुमति और कुमति है। सुमति से संस्कृति का विकास होता है तथा कुमति से विकृति का। व्यंग्य सुमति के हाथ का अंकुश है, जो कुमती के उदद्ण्ड विकारों से उत्पन्न अमंगल को मिटाकर सुमति से प्रस्तुत सुमंगल का मार्ग प्रशस्त करता है। व्यंग्य अमंगलकारी पहले है और मंगल – भवन बाद में। व्यंग्य सुधार थोपने के पक्ष में नहीं है। व्यंग्य का विश्वास विकारों को मार भगाने में है। प्राचीन आचार्यो भरतमुनि, विश्वनाथ, मम्मट, पंडितराज जगन्नाथ, वामन, धनंजय, आदि ने हास्य का अनुशीलन एवं परिशीलन तो किया परंतु यह प्रयत्न व्यंजना के इर्द – गिर्द घूमता रहा है। व्यंग्य पर स्वतंत्र रूप से किसी भी आचार्य ने नहीं लिखा है। व्यंग्य और व्यंजना दोनों शब्द 'वि' धातू से व्युत्पन्न है।' अन्जु व्यक्ति भ्रमण कान्ति गतिबु' यहाँ व्यक्ति से तात्पर्य है विशिष्ट विवेचन। व्यंजना एक शब्द अर्थ है जिसका अर्थ व्यंजित करना होता है। इस अभिप्रेत अर्थ को स्पष्ट करने वाले शब्द को 'व्यंजक' तथा ऐसे अर्थ को 'व्यंगार्थ' कहा जाता है। इस प्रकार किसी कथन का अप्रत्यक्ष रीति से अर्थ ग्रहण किया जाता है। व्यंग्य शब्द का अर्थ है – ब्याज से किसी व्यक्ति अथवा वस्तु पर छींटाकसी करना। इस प्रकार व्यंग्य अर्थगत भंगिमा की वह व्यंजक अभिव्यक्ति हो जो वक्रता और चुटीलेपन के द्वारा सामाजिक विकृतियों पर प्रहार करके सामाजिक जीवन को सही दिशा प्रदान करता है।

मनोज सोनकर कृत ' आत्मकथ्य ' व्यंग्य रचना में समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, शोषण, आतंक, साम्प्रदायिकता, पक्षपातपूर्ण प्रशासन, राजनीतिक भाई–भतीजावाद आदि प्रत्येक परिस्थितियों पर दृष्टिपात किया गया है। इस रचना में व्यंग्य के माध्यम से समाज की अनेक कुरीतियां और समस्याओं का अवलोकन करके उनकी समीक्षा प्रस्तुत की गई है। मनुष्य परिवार और समाज की एक ऐसी महत्वपूर्ण इकाई है, जो न केवल एक स्वस्थ समाज का निर्माण करता है बल्कि पारिवारिक तथा सामाजिक प्रक्रिया को सुचारू रूप से गति भी प्रदान करता है। परिवार तथा समाज में सामंजस्य बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि मानव और समाज में कटुता होगी तो व्यवस्था नहीं बन पाएगी और इस व्यवस्था को मनुष्य ही बनाए रख सकता है। समाज में जब विभिन्न प्रकार की विसंगतियां उत्पन्न होती है तभी साहित्यकारों को उन विषयों पर व्यंग्य करने की कला को दर्शाने का अवसर प्राप्त होता है। आधुनिकता के इस युग में व्यक्ति अपने परम्परागत मूल्यों को त्याग कर उनके स्थान पर नवीन मूल्यों को ग्रहण करने की प्रक्रिया में संघर्ष एक महत्वपूर्ण आवश्यकता बनती जा रही है। यह संघर्ष व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक पहलू परम्परागत मूल्यों, नवीन मूल्यों, सामाजिक स्थिति और आर्थिक परिस्थितियों को भी प्रभावित करता है। व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार, नैतिक मूल्यों में गिरावट, पारिवारिक संबंधों में तनाव, नारी दशा, आडम्बरों का व्यर्थ दिखावा आदि को हम व्यंग्य– विसंगतियों के संदर्भ में विवेचित कर सकते हैं। व्यंग्यकार मनोज सोनकर ने आलोच्य ग्रन्थ' ''आत्म कथ्य'' में सामाजिक परिस्थितियों को व्यंग्य का आधार बनाया है।

परिवार समाज की ही एक इकाई है, लेकिन यह इकाई तभी बनी रह सकती है, जब समाज तथा मनुष्य में सामंजस्य हो। वह अपने कर्तव्यों को समझे तथा अपनी जिम्मेदारी को निभाए। समाज के

स्वस्थ रूप के लिए परिवार का स्वस्थ निर्माण अत्यंत आवश्यक है, परंतु आधुनिक युग में परिवार को पाश्चात्य संस्कृति की नजर लग गई है। परिवार का विखण्डन हो रहा है। मनुष्य अपने आप तक सीमित रहना चाहता है। रिश्ते – नाते, भाई, मां – बाप आदि सबको भुलाकर एकांत में रहना चाहता है। परिवार का यह स्वरूप समाज की जड़ों को कमजोर करता जा रहा है तभी मनोज सोनकर जैसे व्यंग्यकारों ने समाज में व्याप्त पारिवारिक परिस्थितियों को व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयत्न किया है।

लेखक ने समाज में व्याप्त पारिवारिक व्यवस्था के स्वरूप को उजागर करने का प्रयास किया है कि किस प्रकार स्नेह करने मात्र से ही व्यक्ति की मानसिकता में परिवर्तन होना शुरू हो जाता है।

लेखक ने पारिवारिक विसंगतियों को न केवल उजागर किया है बल्कि उसके विभिन्न रूपों की समीक्षा की है। सम्बंधो में कटुता परिवार को ही नहीं बल्कि समाज को भी खोखा कर देती है। जैसे–

'लाऊँगी सर! वे मुस्कुराई है; क्लोज अप मुस्कान।

मैं जानता हूँ, कि स्वीटी नरेन्द्र के साथ खुश हैं और वे भी यह जानती हैं, कि जूली मेरी पंसद हैं। हम दोनों के घर शीशे के बने हुए हैं; इसलिए हमारे हाथ में पत्थर नहीं है। [5]

लेखक ने यहाँ पारिवारिक विघटन का रूप दर्शाते हुए व्यक्त किया है कि आज परिवार चलाना इतना मुश्किल कार्य हो गया है कि तंगी में अपने भी धोखा दे जाते हैं उनका भी कोई दीन – ईमान नहीं रहता। लेखक दूसरो के परिवारों का विखण्डन करवाकर अपना परिवार बनाने का प्रयास करने वालों पर कटाक्ष किये बिना नहीं रहते – 'तेरी सारी शर्तें मंजूर! वे मुस्कराए हैं। मैनें उनके यहाँ एक साल बड़ी खुशी से काम किया है। बाद में वे मेरा काम बढ़ाने लगे हैं। कार भी मुझसे धुलवाने लगे हैं; मार्केट से भाजी भी मुझसे मंगवाने लगे हैं। पोते को स्कूल ले जाने और ले आने का काम भी उन्होनें मुझे सौंप दिया है; लेकिन पगार (वेतन) में एक भी पैसा नहीं बढ़ाए हैं। सेठ जी! आपने मेरा काम तो बढ़ा दिया है; लेकिन पगार नहीं बढ़ाए हैं। मेरी पगार बढ़ाइए! अगर मेरी पगार नहीं बढ़ायेंगे, तो चली जाऊँगी! (–) जाना है, तो अभी जा! यह ले तेरा पैसा! उन्होंने मुझे नौकरी से निकाल दिया है। [6] नोकरानी को भी परिवार का अंग माना जाता है। लेखक कहता है कि मनुष्य अपनी गलतियों के कारण परिवार की व्यवस्था को न केवल क्षति पहुंचाता है बल्कि उसे तहस – नहस कर देता है।

आलोच्य रचना 'आत्मकथ्य' में मनोज सोनकर ने सामाजिक व्यवहार और उसमें व्याप्त विसंगतियों के प्रति अपने कटु अनुभव को व्यक्त करने के लिए अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यंग्य – बाण छोड़े हैं। आधुनिकता के रंग में रंगा व्यक्ति अपने आचरण में जिन प्रवृतियों को बेझिझक अपना रहा है, उनमें अवसरवादिता, रिश्वतखोरी, बेईमानी आदि कुरीतियां समाज के स्वरूप को बदरंग और सामाजिक व्यवस्था को खोखला बनाती जा रही है। किसानों की दशा सुधारने के प्रयास के वादे तो प्रत्येक सरकार करती है परंतु उनकी हालत पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। जहाँ पर किसानों को शुद्ध पेय जल भी प्राप्त नहीं होता वहीं पट्रोल और डीजल के लिए मारधार मची है। मनोज सोनकर ने किसानों में पनप रही अन्तः व बाह्य विकृतियों एवं खण्डित मानसिकता परे व्यंग्य किया है–

'मैं किसान हूँ; नाम दत्तात्रय है। मित्र मुझे दत्तू कहकर पुकारते हैं। कद मेरा लंबा है, सीना चौड़ा है ज़िस्म तगड़ा है; आँखे बड़ी और चमकदार हैं। रंग सांवल है। मूँछे तनी और घनी हैं। गाल उभरे हुए हैं, चेहरा चमकदार है। मेरे चश्मे की फ्रेम असली सोने की है; घूप में गॉगल लगाता हूँ। सर्दी के दिनों में भी मुझे गर्मी लगती है; इसलिए हमेशा एयरकन्डीसन्ड कार में आता जाता हूँ। मेरे पास एक बंगला है, दो कारे हैं; चार ट्रैक्टर्स हैं और आठ ट्रक्स हैं। मेरे बाल सखा, सहपाठी और स्कूल टीचर सखाराम उर्फ संख्या मेरे बंगले पर आए हैं। हम कॉफी पीते हुए और समोसा चखते हुए बातचीत कर रहे हैं। [7]

रेखाचित्र ' क से किसान' के माध्यम से हमारी धरोहर, हमारी पूंजी के बारे में लिखते हुए कहते है कि किसान की दशा प्राचीन समय से ही पददलित और शोषित रही है। पी.एच.डी. जैसी उच्च उपाधी भी सामाजिक भ्रश्टाचार के हत्थे चढ़ गइ है–

'आप मुझसे पूछ सकते हैं, कि किसी भी 'सब्जेक्ट' पर की गई पी. एच.डी. को 'एकजामीनर रिजेक्ट' कर सकता है; फिर 'भाई' पर की गई पी.एच.डी. को वह 'रिजेक्ट' क्यों नहीं कर सकता? आपका सवाल बिल्कुल सही है, सौ सैंकडा सही है; लेकिन आपका यह सवाल आपकी कम जानकारी की संतान भी है। अगर आपको मेरे लंबे हाथों के बारे मे पता होता, तो आप मुझसे यह सवाल नहीं पूछते। इतना इशारा करने के बाद भी अगर आप नहीं समझते हैं, तो खुलकर समझाता हूं। गोली से भी ज्यादा खतरनाक मेरा फोनकाल होता है। जैसे ही 'भाई' पर की गई पी.एच.डी. एक्जामीनर के पास पहुँचेगी; मैं एक फोन घुमाऊँगा–साले! चशमिश! जिंदा रहना चाहता है या नहीं? [8]

'समाज के परिवर्तन और सही दिशा प्रदान करने में मूल्य अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है, लेकिन बदलते परिवेश और मूल्यों के व्यवसायीकरण के कारण समाज का स्तर गिरता जा रहा है। सोनकर जी के परिवर्तित मूल्यों के प्रति विचार देखिए–' बेटा! इन्सान और इन्सान के बीच दीवार नहीं खड़ी करनी चाहिए! दिल दरिया होना चाहिए। दरियादिल इन्सान की सभी इज्जत करते हैं; वह महान माना जाता है; बड़ा माना जाता है। मेरे इस बयान का खूब प्रचार और प्रसार हुए है। इस बयान से प्रभावित होकर मुनखुन नफीसा को भगाकर कलकत्ता ले गया है और पुलिस ने मुझे अंदर कर दिया है। [9]

मनोज सोनकर कृत ' आत्मकथ्य ' व्यंग्य रचना में खेतिहारों को खेती के औजारों के लिए लकड़ी प्राप्त करने हेतु तहसीलदार की कचहरी में चक्कर लगाने पड़ते है और उधर शहरों में अपने ही कल्याण की अनेक योजना बनती हैं। देहाती हलवाहा के नसीब में भोजन–भूषा,भवन की समस्या है, यहाँ नगरीय बाबू को विदेशी वस्तुएं अप्राप्त होने से रंज है। भारतीय कृषकों के पास भूराजस्व भरने के लिए पैसे नहीं, जबकि बंबई में रेसकोर्स मैदान में घोडों के शौक के लिए हजारों रूपये बरबाद किये जाते हैं। वह बेचारा दिन–रात परिश्रम करता है फिर भी एक जून की रोटी मयस्सर नहीं होती और उधर पार्टी में अन्नपूर्ण ब्रह्म को फेंकने की होड़ लगी रहती है। स्वातंत्रयोतर काल में उसकी स्थिति में यही परिवर्तन हुआ कि उसने साहूकार के शिकंजे से तो मुक्ति पायी है, मगर बैंक की अर्थप्रणाली में वह फंसा हुआ है। हमारे देश किसानों का प्रत्येक वर्ग के द्वारा शोषण किया जाता है। चाहे वह नेता हो, उधोगपति हो या कोई सामाजिक व्यक्ति वे प्रत्येक दशा में किसानों की परिस्थितियों में से अपना फायदा ढूंढने का प्रयास करते है। सरकार भी इस काम में पीछे नहीं हटती वह भी किसानों का हितैषी होने का खोखला दावा करती है लेकिन बैंक के द्वारा लोन आदि देकर उनकी जमीन गिरवी रख ली जाती है तथा अकाल या फसल बरबाद होने की दशा में उनकी जमीनों को सरकार अपने अधिकार में ले लेती है। 7

उपर्युक्त उदाहरण के माध्यम से लेखक ने यही दर्शाने का प्रयास

किया है कि किस प्रकार पैसे वाले लोग व्यर्थ में पैसा बहाना पसंद करते हैं। लेकिन आम–जन की सहायता के लिए कोई आगे नहीं आता। लेखक ने जन–सामान्य की दयनीय दशा का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है।

यहाँ स्पष्ट रूप से आधुनिक समय की शिक्षा की दुकानों पर व्यंग्य करके इसके प्रति लेखक ने चिंता व्यक्त करते हुए इसमें सुधार की आवश्यकता पर बल दिया है। मनोज सोनकर ने आलोच्य ग्रन्थ' ''आत्म कथ्य''में ने शिक्षक तथा शिक्षार्थी की मानसिकता को व्यक्त करने का प्रयास किया है कि किस प्रकार विधार्थी परीक्षा में पास होने के लिए नए–नए हथकंडो का प्रयोग करते नजर आते हैं। जैसे–

–'अपने कौवा तो देखा ही होगा! मैंने पूछा था।– देख रहें हैं। ब्रजेन्द्र मुस्कुराया था। कौवे की बोली तो आप लोगों ने सुनी ही होगी। सुनी है और सुन भी रहें हैं। कुत्ता भूँक कर लोगों को सावधान करता है। हम सावधान हो रहें हैं। मैंने मैना नहीं देखा है। हमने देखा है।

मैना तो जंगलों, बाग–बगीचों में होती है।

क्लास रूम में भी हाती है.....। [10]

शिक्षण संस्थानों में व्याप्त अव्यवस्था के प्रति लेखक ने आक्रोश जताया है। किस प्रकार छात्रों की सहायता की जाती है यह समाज में शिक्षा के स्तर की वास्तविकता को उजागर करने का प्रयास किया गया है, ताकि शिक्षा के स्तर को सुधारा जा सके।

'क साहब जून में खूब माल बटोरते हैं। कई कॉलेज के प्रिसिपलों से इनकी बहुत अच्छी जान–पहचान हैं। ये डंके की चोट विद्यार्थियों को एफ.वाय. आर्टस, एफ.वाय. साइंस और एफ.वाय. कामर्स में एडमीसन दिलाते हैं। हमारे प्रिंसीपल के पास इनकी कई शिकायतें पहुँची हैं; लेकिन उन्होंने कोई एक्सन नहीं लिया है। लगता है, कि प्रिंसीपल भी पटे हुए हैं। [12]

निष्कर्ष

साहित्यकार भी मिथ्या प्रशंसा हेतु झूठी समीक्षएं छपवाने में नहीं हिचकिचाते। एक उदाहरण देखिए–'मैंने भी प्रकाशन मूल्य देकर कुछ पुस्तकें छपवाई है। समीक्षार्थ अपनी पुस्तकें पत्र–पत्रिकाओं में भी भेजी हैं। एक पत्रिका में मेरी कविता पुस्तक 'जलपरी' की समीक्षा छपी है–यह पुस्तक पढ़ने के बाद यह विचार विवादास्पद नहीं रह जाता है, कि कवि पागल होते हैं। कविता सर्वोत्म ललित कला है; उसके कुछ तत्त्व हैं; उन तत्त्वों की कवि को ज़रा भी जानकारी नहीं है। यह पुस्तक यह प्रमाणित करती है, कि कवि दुस्साहसी और ढ़ीठ है। कविता का क्षेत्र ऐसे दुस्साहसियों और ढीठों के कारण दिन–ब–दिन दूशित होता जा रहा है। यह अत्यंत सोचनीय विशय है।

संदर्भ

1. नई कहानियाँ मार्च 69, पृ0 117।
2. डॉ0. छविनाथ मिश्र : आधुनिक व्यंग्य का स्त्रोत और स्वरूप,पृ0 11
3. ब्रजरत्नदास (सम्पादित) : भारतेन्दु ग्रन्थावली भाग – 3 पृ0 858
4. हरिशंकर परसाई : अपनी – अपनी बीमारी, पृ0 76
5. मनोज सोनकरःआत्म कथ्य पृ0 42
6. मनोज सोनकरःआत्म कथ्य पृ0 12
7. मनोज सोनकरःआत्म कथ्य पृ0 32
8. मनोज सोनकरःआत्म कथ्य पृ0 43
9. मनोज सोनकरःआत्म कथ्य पृ0 54
10. मनोज सोनकरःआत्म कथ्य पृ0 25
11. मनोज सोनकरःआत्म कथ्य पृ0 47